बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 180

निर्यात की समस्या

केंद्रीय वाणिज्य मंत्रालय के ताजा आंकड़े बताते हैं कि अगस्त 2019 में देश का निर्यात 6 फीसदी तक कम हुआ। यह निर्यात क्षेत्र में लंबे समय से चली आ रही मंदी की स्मृति को ताजा कराने वाला वाकया है। यह सच है कि इस ढांचागत समस्या का देश के बाहरी संतुलन की स्थिरता पर कोई तात्कालिक असर नहीं होगा क्योंकि घरेलू मांग में कमी के चलते आयात में भी गिरावट आ रही है। परंतु फिर भी निर्यात की इस समस्या का हल आवश्यक है। इंजीनियरिंग वस्तुओं के निर्यात में गिरावट खासी दिक्कतदेह है क्योंकि गत वित्त वर्ष में इसमें सुधार नजर आया था।

केंद्रीय वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल का यह कहना सही है कि निर्यात वृद्धि किसी भी विकास नीति के केंद्र में होती है। उन्होंने गत सप्ताह बोर्ड ऑफ ट्रेड की एक बैठक में कहा था कि अगर देश को सरकार द्वारा तय विकास लक्ष्य हासिल करने हैं तो उसे निर्यात में 19-20 फीसदी की दर से वृद्धि हासिल करनी होगी। उन्होंने यह भी कहा था कि अगले पांच वर्ष में एक लाख करोड़ डॉलर मूल्य का निर्यात किया जा सकता है और चीन तथा अमेरिका के व्यापारिक युद्ध के बीच भारतीय निर्यातकों के लिए काफी अवसर हैं। इस कारोबारी जंग से उत्पन्न वैश्विक मंदी की स्थिति भी भारत के लिए एक अवसर लेकर आई है। फिलहाल विश्व व्यापार में बमुश्किल 2 फीसदी हिस्सेदारी रखने वाला भारत नए बाजारों में विस्तार कर सकता है।

भारत के लिए यह निर्यात वृद्धि अहम है लेकिन दिक्कत यह है कि यह लक्ष्य हकीकत से दूर नजर आता है। अगस्त में आई गिरावट कोई पहला अवसर नहीं है बल्कि इस वित्त वर्ष में दूसरी बार निर्यात वृद्धि में सालाना आधार पर कमी आई है। इस संदर्भ में देखें तो केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने सप्ताहांत पर निर्यात को बढ़ावा देने के लिए जिन उपायों की घोषणा की है वे और अधिक मायने रखते हैं। सीतारमण ने निर्यातकों को नए प्रोत्साहन की घोषणा की जिन्हें शुल्क में छूट या उत्पाद निर्यात में कर छूट का नाम दिया गया है। यह भारत से होने वाले वाणिज्यिक निर्यात संबंधी उस योजना का स्थानापन्न है जो विवादित होकर विश्व व्यापार संगठन तक जा पहुंची। सवाल यह है कि क्या मामूली रद्दोबदल से देश का निर्यात लंबी अवधि में प्रतिस्पर्धी बन सकेगा। हमारे यहां लाल फीताशाही और ऋण की उपलब्धता जैसी ढांचागत समस्याएं भी हैं जिन्हें हल करने की आवश्यकता है। हालांकि सीतारमण ने उस दिशा में भी पहल की है। जैसा कि मंत्री ने कहा भी, निर्यातकों के लिए वस्तु एवं सेवा कर के इनपुट कर क्रेडिट का स्वचालित रिफंड कार्यशील पूंजी की कमी की समस्या को हल करने में मदद करेगा। इसी प्रकार आरबीआई द्वारा निर्यातकों को प्राथमिक क्षेत्र के ऋण मानकों में शिथिलता का भी लाभ मिलेगा। ये दोनों पिछले कुछ समय से लागू हैं और सीमारमण के पैकेज में कुछ खास नया नहीं है।

असली अंतर निर्यात क्षेत्र में वैश्विक मानकों को अपनाने से आएगा। वित्त मंत्री ने कहा कि निर्यात मंजूरी के जो काम अभी हाथ से किए जाते हैं उनको जल्दी ही डिजिटल किया जाएगा। उन्होंने इस बदलाव के लिए दिसंबर की समय सीमा तय की है। इस प्रक्रिया में तकनीक का इस्तेमाल केवल अपने काम में नहीं बल्कि बंदरगाह पर जहाजों और ट्रकों के लौटने के समय को वैश्विक मानकों के अनुरूप बनाने में भी किया जाना चाहिए। वैश्विक बंदरगाहों पर जहाज आधे दिन में हट जाते हैं जबकि ट्रक आधे घंटे में। हमें यह लक्ष्य लेकर चलना होगा। अगर हम इसे हासिल कर सके तो देश की निर्यात प्रतिस्पर्धा में बड़ा सुधार नजर आएगा।

अजय मोहंती

वास्तविक आर्थिक सुधार का अब भी इंतजार

सरकार को यह समझना होगा कि उसके कुछ नीतिगत कदमों के बाद भी विदेशी निवेशक बिकवाली क्यों कर रहे हैं ? निवेशकों की चिंताओं के बारे में बता रहे हैं **आकाश प्रकाश**

विदेशी निवेशक अब भी अपनी इक्विटी बेचने में लगे हुए हैं। वे रोजाना करीब 10 से 20 डॉलर की निकासी कर रहे हैं। भारतीय शेयर बाजारों का प्रदर्शन साल के अधिकांश समय में सकारात्मक रहे वैश्विक बाजारों से नीचे बना हुआ है।

भारत की वृहद आर्थिक तस्वीर अनुकूल है। कच्चे तेल के भाव 60-70 डॉलर प्रति बैरल के दायरे में हैं। करीब 17 लाख करोड़ डॉलर का वैश्विक कर्ज ऋणात्मक ब्याज दर दे रहा है। मजबूत वृद्धि लायक किसी भी देश को भरपूर पूंजी आकर्षित करने में सक्षम होना चाहिए। दुनिया भर में केंद्रीय बैंक ब्याज दरों में एक और कटौती का मन बनाते दिख रहे हैं। ऐसे में तरलता की कोई कमी नहीं है। सरकार ने घरेलू एवं बाहरी दोनों ही तरह के निवेशकों की बातें सुनी और पूंजीगत लाभ पर लगने वाले अधिभार को हटा दिया है। इस अधिभार को लेकर निवेशक चिंता जताते रहे हैं। इस बात को भी माना गया है कि वृद्धि दर अस्वीकार्य स्तर तक सुस्त पड़ चुकी है और इस सुस्ती को दूर करने के लिए नीतिगत कदम उठाए जा रहे हैं।

इसके अलावा वैश्विक पूंजी का देश से बाहर जाना बदस्तूर जारी है। वैश्विक या क्षेत्रीय फंड से जुड़े निवेशकों के साथ चर्चा करने पर निम्नलिखित चिंताएं उजागर हुई हैं:

चिंता इस बात को लेकर है कि मौजूदा सुस्ती की प्रवृत्ति चक्रीय होने के बजाय कहीं संरचनात्मक तो नहीं है। वैश्विक स्तर पर दरों में लगातार कटौती होने से लगता है कि नॉमिनल वृद्धि दर दुनिया भर में नाटकीय रूप से सुस्त होने वाली है। शायद भारत अब 7-8 फीसदी के बजाय लंबे समय तक 5-6 फीसदी वृद्धि की ही राह पर रहने वाला है। मुद्रास्फीति के लगातार नीचे रहने से नॉमिनल वृद्धि दर 8-9 फीसदी तक रह सकती है। एक अंक वाली नॉमिनल वृद्धि होने से कॉर्पोरेट आय वृद्धि भी इसी स्तर पर टिक सकती है। सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में बेहद कम लाभ हिस्सेदारी को देखते हुए अधिकतर निवेशकों ने आने वाले पांच वर्षों में भारत के लिए दो अंकों वाली आय वृद्धि का अनुमान रखा था। बाकी उभरते बाजारों की तुलना में भारत के मूल्यांकन प्रीमियम को सही ठहराने के लिए ऐसा किया गया था। दो अंक वाली उच्च आय वृद्धि के अनुमानों का पूरा हो पाना मुश्किल लग रहा है। निवेशकों का अपना मुनाफा हिस्सा छोड़ने के लिए तैयार होने का मतलब पुरानी स्थिति की वापसी है। हो सकता है कि यह भी एक नया सामान्य हो। जहां भारत अब भी अधिकांश देशों की तुलना में तेजी से वृद्धि करेगा, वहीं निरपेक्ष स्तर निराशाजनक हो सकते हैं। इसके लिए मूल्यांकन को दुरुस्त करने की जरूरत पड़ सकती है।

यह चिंता भी है कि चक्रीय-रोधी राजकोषीय कदम की गुंजाइश नहीं रह गई है। जीडीपी वृद्धि धीमी होने से कर राजस्व निराश करेगा और बाजार के कमजोर होने से विनिवेश से भी बहुत कुछ नहीं मिलेगा। ऐसे में नीति-निर्माताओं के पास इकलौता रास्ता मौद्रिक नीति का रह जाता है। वे इस विकल्प का इस्तेमाल भी कर रहे हैं लेकिन हताश हो चुका कंपनी जगत कम दरों के बावजूद निवेश से परहेज कर सकता है। बहुतों का मानना है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था भी सुस्त पड़ने वाली है। इस तरह हमारी वृद्धि चुनौतियों से निपटने में व्यापार एवं निर्यात मददगार नहीं हो सकते हैं। संरचनात्मक सुस्ती की बात करते हुए कई निवेशक कहते हैं कि सरकार के पास इस खाई से निकलने की सीमित क्षमता ही है।

कर्ज विन्यास को लेकर भी डर देखा जा रहा है। सरकारी कर्ज का प्रतिफल करीब 8.3 फीसदी है। अगर नॉमिनल जीडीपी पहली तिमाही की ही तरह इस आंकड़े से कम बनी रहती है तो कर्ज की हालत और बिगड़ सकती है।

एक और चिंता वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) को लेकर है। कई निवेशकों का मानना है कि जीएसटी संरचना में बदलाव करना पड़ेगा। केंद्र ने राज्यों को 14 फीसदी कर राजस्व की गारंटी दी हुई है लेकिन नॉमिनल जीडीपी के एक अंक में रहने से इतना राजस्व दे पाना असंभव होगा। केंद्र सरकार को इसकी भरपाई के लिए अपने अन्य संसाधन झोंकने पड़ेंगे। रसीदों का मिलान अंतिम विकल्प हो सकता है। इसके लागू हो जाने पर हम कुछ उछाल देख सकते हैं। इसके बगैर समूचे कर ढांचे पर ही नए सिरे से सोचना पड़ेगा। हमने सोचा था कि जीएसटी आने से राजकोषीय स्थिति सुधरेगी। लेकिन यह राजकोषीय गतिशीलता को गंभीर रूप से बाधित कर रहा है। सुस्ती के दौर में नीची नॉमिनल जीडीपी और क्रियान्वयन संबंधी चुनौतियां बरकरार रहने से इस साल एक लाख करोड़ रुपये राजस्व की कमी हो सकती है।

तीसरी चिंता कंपनी कामकाज एवं पारदर्शिता को लेकर है। भारतीय कंपनी जगत में कामकाज के मानकों के लेकर वास्तविक बेचैनी है। सीजी पावर मामला इसकी एक मिसाल है। वास्तविक कर्ज बैलेंस शीट में दिखाए गए कर्ज से दोगुना कैसे हो सकता है ? कोई कंपनी प्रबंधन या निदेशक की जानकारी के बगैर हजारों करोड़ रुपये का कर्ज कैसे छिपा सकती है ? आईएलऐंडएफएस मामले की असली प्रकृति, आकार और जटिलता अब साफ नजर आ रही है।

बैंकों को इन कर्जों पर 50 फीसदी नुकसान झेलना पड़ सकता है। वित्तीय प्रणाली को 45,000-50,000 करोड़ रुपये गंवाना पड़ सकता है। ऑडिटर, रेटिंग एजेंसियां, प्रबंधन और बोर्ड धोखाधड़ी या अक्षमता की जद में आ सकते हैं। पेशेवर रूप से संचालित और बोर्ड द्वारा प्रबंधन की जा रही कंपनियां अपवादों में ही हैं। बोर्ड भी प्रबंधन के चंगुल में फंस जाता है। अधिकतर निवेशक अब बढ़िया प्रदर्शन का रिकॉर्ड रखने वाले एक सशक्त प्रवर्तक को ही प्राथमिकता देते हैं। इससे कम-से-कम एजेंसी समस्या कम हो जाती है। सच तो यह है कि वित्तीय बाजारों में भरोसे की भारी कमी है। खराब परिचालन मानक मूल्यांकन गुणकों को कम कर देंगे।

भारचीय इक्विटी बाजारों का संकुचन दो साल पहले ही शुरू हो गया था। उस समय बाजार सही थे और बेहतर कामकाज वाले स्थापित नामों को फायदा हुआ था। गुणवत्ता प्रीमियम का भुगतान सही था।

कॉर्पोरेट इंडिया की धारणा निचले स्तर पर बनी हुई है। निवेशकों के लिए सकारात्मक बने रह पाना मुश्किल हो रहा है। कंपनियां मांग न होने, वित्तीय प्रणाली में जोखिम बढ़ने, न्यायिक सक्रियता, सहानुभूति न रखने वाले नीति-निर्माताओं एवं नियामकों और खराब लाभप्रदता की शिकायत कर रही हैं। मैंने 2012-13 के बाद इस तरह की नकारात्मक कारोबारी धारणा नहीं देखी है।

भले ही सरकार ने कदम उठाने और सुस्ती की रूपरेखा बनानी शुरू कर दी है लेकिन यह काफी नहीं है। सरकार के अलग-अलग अंगों के बीच और नीति-निर्माताओं एवं कंपनी जगत के बीच संवाद की कमी नजर आती है। हमें कंपनी जगत का भरोसा बहाल करने की जरूरत है। निवेशक इस सुस्ती को वास्तविक सुधारों के एक अवसर के तौर पर देखना चाहते हैं। भारत को कारोबार के लिए अधिक माकूल नजर आना चाहिए।

इनमें से कुछ बिंदुओं पर मैं अधिक नकारात्मक नहीं हूं लेकिन उम्मीद है कि सरकार अधिक महत्त्वाकांक्षी आर्थिक सुधारों का एजेंडा पेश करेगी। मुझे नहीं लगता है कि यह सुस्ती संरचनात्मक है। अब एनबीएफसी संकट का एक साल पूरा होने वाला है, ऐसे में आधार अनुकूल होने से वृद्धि बेहतर नजर आने लगेगी। मुनाफा हिस्सेदारी एवं जीडीपी आंकड़े मौजूदा स्तर से सुधरेंगे। वैश्विक वृहद परिदृश्य शायद ही इससे बेहतर रहा है। ऐसे में अगला छह महीना खरीद का मौका साबित हो सकता है।

(लेखक अमांसा कैपिटल से संबद्ध हैं)

बाजार दुरुपयोग की जांच में एक नया अध्याय

बाअदब

सोमशेखर सुंदरेशन

देश की सबसे बड़ी अदालत अपनी राय रख चुकी है। ऐसे में जाहिर है कि प्रतिस्पर्धा आयोग के अधीन बाजार के दुरुपयोग की जांच के क्षेत्र में एक नया अध्याय लिखा जाएगा।

देश में प्रतिस्पर्धा कानून की व्याख्या में पिछले दिनों अप्रत्याशित रूप से एक बदलाव दर्ज किया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (सीसीआई) को दिया गया एक निर्देश बरकरार रखा जिसमें उबर द्वारा कथित रूप से आक्रामक मूल्य निर्धारण किए जाने की जांच करने को कहा गया था। परंतु बात केवल आक्रामक मूल्य निर्धारण की नहीं हैं बल्कि इसकी भी है कि क्या प्रतिस्पर्धा कानून के उद्देश्य के लिए बाजार में एक से अधिक कंपनी का दबदबा हो सकता है।

पूरी दुनिया में आक्रामक मूल्य निर्धारण को प्रतिस्पर्धा कानून के क्षेत्र में एक विवादास्पद विषय माना जाता है। आक्रामक कीमतों से तात्पर्य मोटे तौर पर यही है कि वस्तुओं अथवा सेवाओं को ऐसे मूल्य पर बेचा जाए कि उनकी लागत भी नहीं निकल पा रही हो। दूसरे शब्दों में यह आर्थिक दृष्टि से एकदम अतार्किक निर्णय होता है जहां कोई रसूखदार उपक्रम या कारोबारी वस्तुओं अथवा सेवाओं की आपूर्ति लगातार घाटे में करता है। ऐसा अन्य प्रतिस्पर्धियों का कारोबार खत्म करने के लिए किया जाता है।

कई जगह केवल इतना ही पर्याप्त नहीं होता, बल्कि ऐसे प्रमाणों की भी आवश्यकता होती है जो बताएं कि प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने के बाद कीमतों में इजाफा करके पुराने घाटे की भरपाई करने की कोशिश की गई हो। आक्रामक व्यवहार से प्रतिस्पर्धा पहले ही समाप्त हो चुकी होती है इसलिए विरोध की कोई गुंजाइश नहीं रहती। भारत में प्रतिस्पर्धा आयोग की धारा 4 का संबंध दबदबे के दुरुपयोग से है। इसके लिए पहले यह स्थापित करना होता है कि किसी एक उपक्रम का दबदबा है और उसका दुरुपयोग हो रहा है। यहां अन्य चीजों के अलावा रसूखदार या दबदबे वाली स्थिति को परिभाषित किया गया है। इसका अर्थ है किसी उपक्रम की ऐसी मजबूत स्थिति जो किसी प्रासंगिक बाजार में उसे यह क्षमता प्रदान करती हो कि वह अन्य प्रतिस्पर्धियों अथवा उपभोक्ताओं को अपने पक्ष में प्रभावित कर सके।

उबर के खिलाफ शिकायत यह थी कि वह दिल्ली में प्रति यात्रा जो किराया वसूल कर रही है वह प्रत्येक यात्रा की लागत का आधा था। सीसीआई ने इस मामले की जांच करने से इनकार कर दिया। सीसीआई के निर्णयों पर सांविधिक अपीलों की सुनवाई करने वाले राष्ट्रीय कंपनी लॉ अपील पंचाट ने अपील करने पर कहा कि सीसीआई को इस आधार पर मामले की जांच करनी चाहिए कि किराया लागत से असंगत रूप से कम रखा गया था। उसने कहा कि रसूखदार कारोबारी होने के कारण मामले की जांच आवश्यक है।

सर्वोच्च न्यायालय ने उबर की अपील को खारिज कर दिया और कहा कि अगर तथ्यों से यह नजर आता है कि कीमतें ऐसी हैं कि प्रत्येक यात्रा पर घाटा हो रहा है तो प्रथम दृष्टया यह मामला बनता है कि शायद संबंधित उपक्रम बाजार में दबदबा रखता हो। अदालत ने कहा कि यह कीमत निश्चित रूप से बाजार में प्रतिस्पर्धियों को प्रभावित करेगी। अदालत ने यह भी कहा कि कीमतों को लागत से कम रखना प्रथम दृष्टया अपने दबदबे के दुरुपयोग का मामला लगता है। ऐसे में अपील पंचाट के जांच के निर्णय को बरकरार रखा गया और सीसीआई के इस निर्णय को नकार दिया कि मामले की जांच की आवश्यकता नहीं थी।

आरोप यह था कि उबर ऐसे नुकसान की भरपाई अधिक पूंजी लगाकर करेगी। दूसरे शब्दों में कहें तो एक लचर नियामकीय व्यवस्था का लाभ लेने के लिए पूंजी की मदद ली जा रही थी और प्रतिस्पर्धा समाप्त की जा रही थी। अदालत ने कहा कि यह कहना बहुत मुश्किल है कि इस मामले में जांच की आवश्यकता नहीं है। शुरुआती वर्षों में सीसीआई तकनीकी रूप से सक्षम संस्थानों के मामले में बहुत कातर रुख रखता था। तकनीकी नवाचार को लेकर या कैसे राज्य सरकारों को नवाचार में गतिरोध नहीं पैदा करना चाहिए जैसी दलीलें देकर किसी भी तरह की जांच के खिलाफ माहौल तैयार किया जाता था। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ने इस रुख पर रोक लगा दिया।

इसके अलावा बाजार के दुरुपयोग के मामलों में सीसीआई ने ऐतिहासिक रूप से जो रुख अपना रखा था, उसे भी इस निर्णय से झटका लगा। यह दलील दी जा सकती है और यह स्वीकार्य भी है कि अगर एक से अधिक लोग लागत से कम मूल्य की पेशकश कर रहे हों तो इसका यह अर्थ होगा कोई भी रसूखदार स्थिति में नहीं है। यह दिलचस्प नीतिगत स्थिति है क्योंकि दो उद्यम साथ आकर रसूखदार बन सकते हैं और साथ मिलकर बाजार का दुरुपयोग कर सकते हैं। वैकल्पिक रूप से देखें तो दोनों उपक्रमों में से प्रत्येक में यह क्षमता हो सकती है कि वह बाजार पर दबदबा कायम कर सके और प्रतिस्पर्धा को प्रभावित कर सके।

सीसीआई ने ऐतिहासिक रूप से इस रुख का समर्थन किया है कि एक बाजार में एक से अधिक रसूखदार उपक्रम नहीं हो सकते। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बाद अब यह स्पष्ट है कि अगर कोई उपक्रम निरंतर अपनी कीमत लागत से कम रखता है तो वह रसूखदार स्थिति में होगा। अगर एक से अधिक उपक्रम ऐसा करते हैं तो इसका अर्थ यह होगा एक से अधिक रसूखदार उपक्रम मौजूद हैं। अदालत की दलील के मुताबिक ऐसा हर उपक्रम जो रसूखदार हो सकता है, उसकी जांच की जा सकती है।

देश की सबसे बड़ी अदालत अपनी राय रख चुकी है। ऐसे में जाहिर है कि प्रतिस्पर्धा आयोग के अधीन बाजार के दुरुपयोग की जांच के क्षेत्र में एक नया अध्याय लिखा जाएगा।

कानाफूसी

शैलजा को हां, तंवर को ना

यह सवाल सबके मन में है कि आखिर कुमारी शैलजा को हरियाणा कांग्रेस का प्रमुख क्यों बनाया गया है और राहुल गांधी के वफादार माने जाने वाले अशोक तंवर को बाहर का रास्ता क्यों दिखाया गया है। जानकार बताते हैं कि ऐसा इसलिए है क्योंकि शैलजा के समर्थक जानते हैं कि उनके पास मां है। लोकसभा में जब सोनिया गांधी का स्वास्थ्य बिगड़ा तो उन्होंने सदन से बाहर जाने के लिए शैलजा की मदद ली और कार के आने तक वही उनके साथ अकेले खड़ी रहीं। शैलजा के पिता कांग्रेस के वरिष्ठ सदस्य रहे हैं और उनके निधन के बाद ही शैलजा को पहली बार लोकसभा का टिकट मिला था। ऐसे में परिवारवाद का आरोप लगने की आशंका के बावजूद उनको पार्टी प्रमुख बनाया गया है। अब मामला बराबरी पर है क्योंकि विधायक दल के नेता बीएस हुड्डा और शैलजा दोनों 2019 का लोकसभा चुनाव हार चुके हैं। तंवर और हुड्डा जहां एक दूसरे को पसंद नहीं करते, वहीं हुड्डा और शैलजा में मित्रवत संबंध हैं। जाहिर है तंवर के समर्थक इससे बुरी तरह नाखुश हैं। एक बात और है, हुड्डा यह साबित कर चुके हैं कि आला कमान को निर्णय लेने पर मजबूर किया जा सकता है। हरियाणा के पूर्व मुख्यमंत्री ने अपने 36 वफादारों का एक पैनल बनाया था जिसने पिछले दिनों उनसे कहा कि वे अपने धड़े के आगे के कदम के बारे में निर्णय लें। शायद आलाकमान को इस बात का अंदाजा हो गया था कि बिना हुड्डा के प्रदेश में कांग्रेस की क्या स्थिति होगी। हकीकत में क्या होगा यह देखना होगा ?

आपका पक्ष

शिक्षा व्यवस्था पर ध्यान दे सरकार

देश में शिक्षा व्यवस्था बदतर होती जा रही है। टाइम्स हायर एजुकेशन द्वारा जारी विश्व यूनिवर्सिटी रैंकिंग 2020 की सूची में 300 संस्थानों में भारत के एक भी संस्थान को जगह नहीं मिली है। भारत में शीर्ष स्थान वाला भारतीय विज्ञान संस्थान बेंगलूरु 251 से 300 वें स्थान से लुढ़कर 301 से 350 वें स्थान पर आ गया है। कुल 92 देशों की 1,300 से भी अधिक विश्वविद्यालयों की इस सूची में 56 भारतीय संस्थान शामिल हुए थे। चिंता का विषय यह है कि हमारी शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता साल दर साल घटती जा रही है। वर्ष 2017 में भारत शीर्ष 200 की सूची में था। वर्ष 2018 में 251वें स्थान पर आ गया। वर्ष 2019 में 300 से 251वें स्थान पर रहा। लेकिन वर्ष 2019 में 300वें स्थान से बाहर होकर 301वें स्थान पर आ गया है। इस सर्वे की संपादक एली बोथवेल ने हालिया रैंकिंग में भारत में संभावनाएं हैं का जिक्र तो किया, साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि 300वें स्थान तक किसी भी भारतीय संस्थान का नहीं पहुंच पाना निराशाजनक है। उन्होंने कहा कि सरकार को इस क्षेत्र में अधिक निवेश करने की जरूरत है। इस वर्ष वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने बजट पेश करते हुए शिक्षा के बजट को बढ़ाने की घोषणा की, मगर सारा जोर उन्होंने उच्च शिक्षा पर दिया। वित्त मंत्री ने घोषणा की थी कि सरकार ने विश्वस्तरीय संस्थान बनाने के लिए 400 करोड़ रुपये आवंटित किए हैं। जबकि स्कूली शिक्षा पर मौन रहकर वित्त मंत्री ने इस बात की अनदेखी कर दी कि प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता बिना उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार नहीं किया जा सकता। बजट में शिक्षा के लिए सिर्फ 94,854 करोड़ रुपये अर्थात बजट का मात्र 3 प्रतिशत आवंटित किया गया जो पर्याप्त नहीं है। इस विश्वस्तरीय सूची में पहला और दूसरा स्थान भले ही ब्रिटेन का हो, लेकिन शीर्ष 20 की सूची में सबसे अधिक अमेरिका के संस्थान हैं। अमेरिका के सफलता के पीछे का कारण शिक्षा में अधिक निवेश करना है। सरकार को सोचना चाहिए कि विकसित होने के बावजूद भी जो देश शिक्षा पर इतना निवेश करता है, तो फिर हमें भी इस पर ध्यान देने की जरूरत है। शिक्षा के मामले में चीन, जापान और कोरियाई देश भारत से आगे है।

दामिनी वर्षा, बक्सर

टाइम्स हायर एजुकेशन द्वारा जारी सर्वे में भारत के शिक्षण संस्थान 300वें स्थान से बाहर हैं

एक देश एक भाषा की जरूरत

विगत 14 सितंबर को देश में हिंदी दिवस मनाया गया। लेकिन यह दुर्भाग्य है कि हिंदी देश की सरकारी कामकाज की भाषा नहीं बन सकी है। आज भी सरकारी कामकाज अंग्रेजी में ही होता है जो अंग्रेजों की देन है। देश को आजाद हुए सात दशक हो गए लेकिन पूरे देश के लिए कोई एक भाषा राष्ट्रीय भाषा नहीं बन सकी है। हिंदी दिवस पर गृह मंत्री अमित शाह ने कहा कि भारत में कई भाषाएं हैं और हर भाषा का अपना महत्त्व है। लेकिन यह बेहद जरूरी है कि पूरे देश में एक भाषा होनी चाहिए जो वैश्विक रूप से भारत की पहचान बने। गृह मंत्री का यह बयान पूरे देश को एकसूत्र में पिरोने वाला तो है लेकिन कुछ नेता अपने स्वार्थ के लिए इस मामले में राजनीति करने लगे हैं। आज भारत में लगभग 40 प्रतिशत आबादी हिंदी भाषी है। अत: हिंदी को राष्ट्रीय भाषा का दर्जा दिया जाना उचित है।

कमल कुमार, नोएडा

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।